



# पाठ-1

## गुल्ली-डंडा

—प्रेमचन्द

### पाठ की संरचना

- |                   |               |
|-------------------|---------------|
| 1.1 आइए शुरू करें | 1.2 उद्देश्य  |
| 1.3 मूल पाठ       | 1.4 आइए समझें |

### 1.1 आइए शुरू करें

कहानियाँ तो आप पहले भी कई पढ़ चुके होंगे। आज हम आपका परिचय प्रेमचंद की एक प्रसिद्ध कहानी गुल्ली-डंडा से करवा रहे हैं। इस कहानी में 'गया' नाम का एक पात्र है, जो बालमंडली का सबसे अच्छा खिलाड़ी है। सभी बच्चे गया की टीम में रहने पर खुशी अनुभव करते हैं। एक और महत्वपूर्ण पात्र है- थानेदार का बेटा। कालान्तर (समय बीतने पर) में थानेदार का बेटा एक इंजीनियर बन उस कस्बे में आता है और बचपन की उन पुरानी यादों में खो जाता है। उसकी भेंट अपने पुराने साथियों से होती है। पुनः गुल्ली-डंडा खेल का आयोजन होता है। आप इस कहानी में उस खेल के रोमांच का अनुभव करेंगे और उन घटनाक्रमों को अपने से जोड़कर गुदगुदी का अनुभव करेंगे।

### 1.2 उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- कहानी की विषय-वस्तु बता सकेंगे।
- कहानी के पात्रों का चरित्र -चित्रण कर सकेंगे।



- कहानी की भाषा-शैली पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- गाँव-गाँव से जुड़े एक महत्वपूर्ण खेल को समझ सकेंगे।
- बालपन में की गई शरारतों पर पुनः एक दृष्टि डाल सकेंगे।
- कहानी का संदेश बता पाएँगे।

## क्रियाकलाप

अपनी स्मृति से ग्रामीण परिवेश पर आधारित किसी कहानी को, जिसे आपने पढ़ा है या सुना है, उसके संदेश को लिखिए।

### 1.3 मूल पाठ

हमारे अंग्रेजीदाँ दोस्त मानें या न मानें, मैं तो यही कहूँगा कि गुल्ली-डंडा सब खेलों का राजा है। अब भी कभी लड़कों को गुल्ली-डंडा खेलते देखता हूँ, तो जी लोट-पोट हो जाता है कि इनके साथ जाकर खेलने लगूँ। न लॉन की जरूरत, न कोर्ट की, न नेट की, न थापी की। मजे से किसी पेड़ की एक टहनी काट ली, गुल्ली बना ली, और दो आदमी भी आ गये; तो खेल शुरू हो गया। विलायती खेलों में सबसे बड़ा ऐब है कि उनके सामान महँगे होते हैं। जब तक कम-से कम एक सैकड़ा न खर्च कीजिए, खिलाड़ियों में शुमार ही नहीं हो सकता। यह गुल्ली-डंडा है कि बिना हरे-फिटकरी के चोखा रंग देता है; पर हम अंग्रेजी चीजों के पीछे ऐसे दीवाने हो रहे हैं कि अपनी सभी चीजों से अरुचि हो गयी है। हमारे स्कूलों में हरेक लड़के से तीन-चार रुपये सालाना केवल खेलने की फीस ली जाती है। किसी को यह नहीं सूझता कि भारतीय खेल खेलायें जो बिना दाम-कौड़ी के खेले जाते हैं। अंग्रेजी खेल उनके लिए है, जिनके पास धन है। गरीब लड़कों के सिर क्यों यह व्यसन मढ़ते हो। ठीक है, गुल्ली से आँख फूट जाने का भय रहता है तो क्या क्रिकेट से सिर फूट जाने, तिल्ली फट जाने, टाँग टूट जाने का भय नहीं रहता ? अगर हमारे माथे में गुल्ली का दाग आज तक बना हुआ है, तो हमारे कई दोस्त ऐसे भी हैं, जो थापी को बैसाखी से बदल बैठे। खैर, यह अपनी-अपनी रुचि है। मुझे गुल्ली ही सब खेलों से अच्छी लगती है और बचपन की मीठी स्मृतियों में गुल्ली ही सबसे मीठी है। वह प्रातःकाल घर से निकल जाना, वह पेड़ पर चढ़कर टहनियाँ काटना और गुल्ली -डण्डे बनाना, वह उत्साह, वह लगन, वह खिलाड़ियों के जमघटे, वह पदना और पदाना, वह लड़ाई-झगड़े, वह सरल स्वभाव, जिसमें छूत-अछूत, अमीर-गरीब का बिल्कुल भेद न रहता था, जिसमें अमीराना चोचलों की, प्रदर्शन की, अभिमान की गुंजाइश ही न थी,



यह उसी वक्त भूलेगा जब.....घरवाले बिगड़ रहे हैं, पिताजी चौके पर बैठे वेग से रोटियों पर अपना क्रोध उतार रहे हैं, अम्माँ की दौड़ केवल द्वार तक है, लेकिन उनकी विचारधारा में मेरा अंधकारमय भविष्य टूटी हुई नौका की तरह डगमगा रहा है, और मैं हूँ कि पदाने में मस्त हूँ, न नहाने की सुधि है, न खाने की। गुल्ली है तो जरा-सी, पर उसमें दुनिया भर की मिठाइयों की मिठास और तमाशों का आनन्द भरा हुआ है।

मेरे हमजोलियों में एक लड़का गया नाम का था। मुझसे दो-तीन साल बड़ा होगा। दुबला, लम्बा, बन्दरों की-सी लम्बी-लम्बी पतली-पतली उंगलियाँ, बन्दरों की-सी ही चपलता, वही झल्लाहट गुल्ली कैसी हो, उस पर इस तरह लपकता था, जैसे छिपकली कीड़ों पर लपकती है। मालूम नहीं उसके माँ-बाप थे या नहीं, कहाँ रहता था, क्या खाता था, पर था हमारे गुल्ली-क्लब का चैम्पियन। जिसकी तरफ वह आ जाय, उसकी जीत निश्चित थी! हम सब उसे दूर से आते देख, उसका दौड़कर स्वागत करते थे और उसे अपना गोइयाँ बना लेते थे।

एक दिन हम और गया दो ही खेल रहे थे। वह पदा रहा था, मैं पद रहा था; मगर कुछ विचित्र बात है कि पदाने में हम दिन भर मस्त रह सकते हैं, पदना एक मिनट का भी अखरता है। मैंने गला छुड़ाने के लिए सब चालें चलीं, जो ऐसे अवसर पर शास्त्र-विहित न होने पर भी क्षम्य हैं, लेकिन गया अपना दाँव लिये बगैर मेरा पिण्ड न छोड़ता था।

अनुनय-विनय का कोई असर न हुआ। मैं घर की ओर भागा।

गया ने मुझे दौड़कर पकड़ लिया और डंडा तानकर बोला-मेरा दाँव देकर जाओ। पदाया तो बड़े बहादुर बनके, पदने की बेर क्यों भागे जाते हो?

‘तुम दिन भर पदाओ तो मैं दिन भर पदता रहूँ।’

हाँ, तुम्हें दिन भर पदना पड़ेगा।’

‘न खाने जाऊँ न पीने जाऊँ’

‘हाँ, मेरा दाँव दिये बिना कहीं नहीं जा सकते।’

‘मैं तुम्हारा गुलाम हूँ?’

‘हाँ, मेरे गुलाम हो।’

‘मैं घर जाता हूँ, देखूँ मेरा क्या कर लेते हो?’

‘घर कैसे जाओगे, कोई दिल्लगी है। दाँव दिया है, दाँव लेंगे।’



‘अच्छा, कल मैंने तुम्हें अमरूद खिलाया था। वह लौटा दो।’

‘वह तो पेट में चला गया।’

‘निकालो पेट से। तुमने क्यों खाया मेरा अमरूद?’

‘अमरूद तुमने दिया, तब मैंने खाया। तुमसे माँगने न गया था।’

‘जब तक मेरा अमरूद न दोगे, मैं दाँव न दूँगा।’

मैं समझता था, न्याय मेरी ओर है। आखिर मैंने किसी स्वार्थ से ही उसे अमरूद खिलाया होगा। कौन निःस्वार्थ किसी के साथ सलूक करता है। भिक्षा तक तो स्वार्थ के लिये ही देते हैं। जब गया ने अमरूद खाया, तो फिर उसे मुझसे दाँव लेने का क्या अधिकार है? रिश्वत देकर तो लोग खून पचा जाते हैं। यह मेरा अमरूद यों ही हजम कर जायगा? अमरूद पैसे के पाँच वाले थे, जो गया के बाप को भी नसीब न होंगे यह सरासर अन्याय था।

गया ने मुझे अपनी ओर खींचते हुए कहा-मेरा दाँव देकर जाओ, अमरूद-समरूद मैं नहीं जानता।

मुझे न्याय का बल था। वह अन्याय पर डटा हुआ था। मैं हाथ छुड़ाकर भागना चाहता था। वह मुझे जाने न देता था! मैंने गाली दी; उसने उससे कड़ी गाली दी, और गाली नहीं, दो-एक चाँटा जमा दिया। मैंने उसे दाँत काट लिया। उसने मेरी पीठ पर डंडा जमा दिया। मैं रोने लगा। गया मेरे इस अस्त्र का मुकाबला न कर सका। भागा। मैंने तुरन्त आँसू पोंछ डाले, डंडे की चोट भूल गया और हँसता हुआ घर में जा पहुँचा! मैं थानेदार का लड़का एक नीच जात के लौंडे के हाथों पिट गया, यह मुझे उस समय भी अपमानजनक मालूम हुआ, लेकिन घर में किसी से शिकायत न की।

(2)

उन्हीं दिनों पिताजी का वहाँ से तबादला हो गया। नई दुनिया देखने की खुशी में ऐसा फूला कि अपने हमजोलियों से बिछुड़ जाने का बिल्कुल दुःख न हुआ। पिताजी दुःखी थे। यह बड़ी आमदनी की जगह थी। अम्माँ जी भर दुःखी थी, लेकिन मैं मारे खुशी के फूला न समाता था। लड़कों से जीट उड़ा रहा था, वहाँ ऐसे घर थोड़े ही होते हैं। ऐसे-ऐसे ऊँचे घर हैं कि आसमान से बातें करते हैं। वहाँ के अंग्रेजी स्कूल में कोई मास्टर लड़कों को पीटे, तो उसे जेहल हो जाय। मेरे मित्रों की फैली हुई आँखें और चकित-मुद्रा बतला रही थीं कि मैं उनकी निगाह में कितना ऊँचा उठ गया हूँ। बच्चों में मिथ्या को सत्य बना लेने की वह शक्ति है, जिसे हम, जो सत्य को मिथ्या



बना लेते हैं, क्या समझेंगे। उन बेचारों को मुझसे कितनी स्पर्द्धा हो रही थी। मानो कह रहे थे-तुम भाग्यवान हो भाई, जाओ हमें तो इस ऊजड़ ग्राम में जीना भी है और मरना भी।

बीस साल गुजर गये। मैंने इंजीनियरी पास की और उसी जिले का दौरा करता हुआ, उसी कस्बे में पहुँचा और डाकबँगले में ठहरा। उस स्थान को देखते ही इतनी मधुर बाल-स्मृतियाँ हृदय में जाग उठीं कि मैंने छड़ी उठाई और कस्बे की सैर करने निकला। आँखें किसी प्यासे पथिक की भाँति बचपन के उन क्रीड़ा-स्थलों को देखने के लिए व्याकुल हो रहीं थीं; पर उस परिचित नाम के सिवा वहाँ और कुछ परिचित न था। जहाँ खंडहर था, पक्के मकान खड़े थे। जहाँ बरगद का पुराना पेड़ था; वहाँ अब एक सुन्दर बगीचा था। स्थान की काया पलट हो गयी थी। अगर उसके नाम और स्थिति का ज्ञान न होता, तो मैं इसे पहचान भी न सकता। बचपन की सँचित और अमर स्मृतियाँ बाँहें खोले अपने उन पुराने मित्रों से गले मिलने को अधीर हो रही थीं; मगर वह दुनिया बदल गयी थी। ऐसा जी होता था कि उस धरती से लिपटकर रोऊँ और कहूँ, तुम मुझे भूल गयीं। मैं तो अब भी तुम्हारा वही रूप देखना चाहता हूँ।

सहसा एक खुली हुई जगह में मैंने दो-तीन लड़कों को गुल्ली-डंडा खेलते देखा। एक क्षण के लिए मैं अपने को बिल्कुल भूल गया। भूल गया कि मैं एक ऊँचा अफसर हूँ, साहबी ठाठ में, रौब और अधिकार के आवरण में।

जाकर एक लड़के से पूछा-क्यों बेटे, यहाँ कोई गया नाम का आदमी रहता है? एक लड़के ने गुल्ली-डंडा समेटकर सहमे हुए स्वर में कहा-कौन गया? गया.....

मैंने यों ही कहा-हाँ-हाँ वही। गया नाम का कोई आदमी है तो। शायद वही हो। 'हाँ, है तो।'

‘जरा उसे बुला ला सकते हो?’

लड़का दौड़ा हुआ गया और एक क्षण में एक पाँच हाथ के काले देव को साथ लिये आता दिखाई दिया। मैं दूर ही से पहचान गया। उसकी ओर लपकना चाहता था कि उसके गले लिपट जाऊँ; पर कुछ सोचकर रह गया। बोला-कहो गया, मुझे पहचानते हो?

गया ने झुककर सलाम किया- हाँ मालिक, भला पहचानूँगा क्यों नहीं? आप मजे में रहे?

“बहुत मजे में तुम अपनी कहो?”

डिप्टी साहब का साईस हूँ।



“मतई, मोहन, दुर्गा यह सब कहाँ हैं ? कुछ खबर है?”

“मतई तो मर गया, दुर्गा और मोहन दोनों डाकिये हो गये हैं, आप?”

“मैं तो जिले का इन्जीनियर हूँ?”

“सरकार तो पहले ही बड़े जहीन थे।”

“अब कभी गुल्ली-डंडा खेलते हो?”

गया ने मेरी ओर प्रश्न की आँखों से देखा-अब गुल्ली-डंडा क्या खेलूँगा सरकार, अब तो पेट के धंधे से छुट्टी नहीं मिलती।

आओ, आज हम तुम खेलें। तुम पदाना, हम पदेंगे। तुम्हारा एक दाँव हमारे ऊपर है। वह आज ले लो।

गया बड़ी मुश्किल से राजी हुआ। वह ठहरा टके का मजदूर, मैं एक बड़ा अफसर। हमारा और उसका क्या जोड़? बेचारा झंप रहा था; लेकिन मुझे भी कुछ कम झंप न थी, इसलिए नहीं कि मैं गया के साथ खेलने जा रहा था, बल्कि इसलिए कि लोग इस खेल को अजूबा समझ कर इसका तमाशा बना लेंगे और अच्छी-खासी भीड़ लग जायगी। उस भीड़ में वह आनन्द कहाँ रहेगा, पर खेले बगैर तो रहा नहीं जाता था। आखिर निश्चय हुआ कि दोनों जने बस्ती से दूर जाकर एकान्त में खेलें। वहाँ कौन कोई देखनेवाला बैठा होगा। मजे से खेलेंगे और बचपन की उस मिठाई को खूब रस ले-लेकर खायेंगे। मैं गया को लेकर डाक बँगले पर आया और मोटर में बैठकर दोनों मैदान की ओर चले। साथ में एक कुल्हाड़ी ले ली। मैं गंभीर भाव धारण किये हुए था, लेकिन गया इसे अभी तक मजाक ही समझ रहा था। फिर भी उसके मुख पर उत्सुकता या आनन्द का कोई चिन्ह न था। शायद वह हम दोनों में जो अन्तर हो गया था, वह सोचने में मगन था। मैंने पूछा- तुम्हें कभी हमारी याद आयी थी गया? सच कहना। गया झंपता हुआ बोला- मैं आपको क्या याद करता हुजूर, किस लायक हूँ। भाग में आपके साथ कुछ दिन खेलना बदा था, नहीं मेरी क्या गिनती। मैंने कुछ उदास होकर कहा -लेकिन मुझे तो बराबर तुम्हारी याद आती थी। तुम्हारा वह डंडा, जो तुमने तानकर जमाया था, याद है न ?

गया ने पछताते हुए कहा-वह लड़कपन था सरकार, उसकी याद न दिलाओ। ‘वाह ! वह मेरे बाल-जीवन की सबसे रसीली याद है। तुम्हारे उस डंडे में जो रस था, वह तो अब न आदर-सम्मान में पाता हूँ, न धन में। कुछ ऐसी मिठास थी उसमें कि आज तक उससे मन मीठा होता रहता है।’ इतनी देर में हम बस्ती से कोई तीन मील निकल आये। चारों तरफ सन्नाटा है। पश्चिम की ओर कोसों तक भीमताल फैला हुआ है, जहाँ आकर हम किसी समय कमल के पुष्प तोड़ ले जाते थे और उसके झुमके



बनाकर कानों में डाल लेते थे। जेठ की संध्या केसर में डूबी चली आ रही है। मैं लपककर पेड़ पर चढ़ गया और एक टहनी काट लाया। चटपट गुल्ली-डंडा बन गया।

खेल शुरू हो गया। मैंने गुच्ची में गुल्ली रखकर उछाली। गुल्ली गया के सामने से निकल गयी। उसने हाथ लपकाया जैसे मछली पकड़ रहा हो। गुल्ली उसके पीछे जाकर गिरी। यह वही गया है, जिसके हाथों में गुल्ली जैसे आप-ही-आप जाकर बैठ जाती थी। वह दाहिने-बायें कहीं हो, गुल्ली उसकी हथेलियों में ही पहुँचती थी। जैसे गुल्लियों पर वशीकरण डाल देता हो। नई गुल्ली, पुरानी गुल्ली, छोटी गुल्ली, बड़ी गुल्ली, नोकदार गुल्ली, सपाट गुल्ली, सभी उसे मिल जाती थीं। जैसे उसके हाथों में कोई चुंबक हो। जो गुल्लियों को खींच लेता हो, लेकिन आज गुल्ली को उससे प्रेम नहीं रहा। फिर तो मैंने पदाना शुरू किया। मैं तरह-तरह की धाँधलियाँ कर रहा था। अभ्यास की कसर बेईमानी से पूरी कर रहा था। हुच जाने पर भी डंडा खेले जाता था, हालाँकि शास्त्र के अनुसार गया की बारी आनी चाहिए थी। गुल्ली पर जब ओछी चोट पड़ती और वह जरा दूर पर गिर पड़ती, तो मैं झटपट उसे खुद उठा लेता और दोबारा टाँड़ लगाता। गया यह सारी-बे-कायदगियाँ देख रहा था, पर कुछ न बोलता था, जैसे उसे वह सब कायदे-कानून भूल गये। उसका निशाना कितना अचूक था। गुल्ली उसके हाथ से निकलकर टन-से डण्डे में आकर लगती थी। उसके हाथ से छूटकर उसका काम था डण्डे से टकरा जाना, लेकिन आज वह गुल्ली डण्डे में लगती ही नहीं। कभी दाहिने जाती है, कभी बायें, कभी आगे, कभी पीछे।

आधा घण्टे पदाने के बाद एक बार गुल्ली डण्डे में आ लगी। मैंने धाँधली की, गुल्ली डण्डे में नहीं लगी, बिल्कुल पास से गयी, लेकिन लगी नहीं।

गया ने किसी प्रकार का असन्तोष न प्रकट किया।

‘न लगी होगी।’

‘डंडे में लगती तो क्या मैं बेईमानी करता’

“नहीं भैया, तुम भला बेईमानी करोगे।”

बचपन में मजाल था कि मैं ऐसा घपला करके जीता बचता। यही गया गरदन पर चढ़ बैठता, लेकिन आज मैं उसे कितनी आसानी से धोखा दिये चला जाता था। गधा है! सारी बातें भूल गया।

सहसा गुल्ली फिर डंडे में लगी और इतने जोर से लगी जैसे बन्दूक छूटी हो। इस प्रमाण के सामने अब किसी तरह की धाँधली करने का साहस मुझे इस वक्त भी न हो सका; लेकिन क्यों न एक बार सच को झूठ बनाने की चेष्टा करूँ ? मेरा हरज



ही क्या है। मान गया, तो वाह-वाह नहीं तो दो-चार हाथ पदना ही तो पड़ेगा। अंधेरे का बहाना करके जल्दी से गला छुड़ा लूँगा। फिर कौन दाँव देने आता है।

गया ने विजय के उल्लास में कहा-लग गयी, लग गयी! टन से बोली। मैंने अनजान बनने की चेष्टा करके कहा-तुमने लगते देखा? मैंने तो नहीं देखा। 'टन से बोली है सरकार।'

'और जो किसी ईंट में लग गयी हो?'

मेरे मुख से यह वाक्य उस समय कैसे निकला, इसका मुझे खुद आश्चर्य है। इस सत्य को झुठलाना वैसे ही था जैसे दिन को रात बताना। हम दोनों ने गुल्ली को डंडे में जोर से लगते देखा था, लेकिन गया ने मेरा कथन स्वीकार कर लिया। 'हाँ, किसी ईंट में ही लगी होगी। डंडे में लगती, तो इतनी आवाज न आती।' मैंने फिर पदाना शुरू कर दिया, लेकिन इतनी प्रत्यक्ष धाँधली कर लेने के बाद, गया की सरलता पर मुझे दया आने लगी, इसलिए जब तीसरी बार गुल्ली डंडे में लगी, तो मैंने बड़ी उदारता से दाँव देना तय कर दिया।

गया ने कहा-अब तो अँधेरा हो गया भैया, कल पर रखो। मैंने सोचा, कल बहुत-सा समय होगा यह न जाने कितनी देर पदाये इसलिए इसी वक्त मुआमला साफ कर लेना अच्छा होगा।

'नहीं, नहीं। अभी बहुत उजाला है तुम अपना दाँव ले लो।'

'गुल्ली सूझेगी नहीं।'

'कुछ परवाह नहीं।'

गया ने पदाना शुरू किया, पर उसे अब बिल्कुल अभ्यास न था। उसने दो बार टाँड़ लगाने का इरादा किया, पर दोनों ही बार हुच गया। एक मिनट से कम में वह दाँव पूरा कर चुका। बेचारा घण्टा भर पदा पर एक मिनट ही में अपना दाँव खो बैठा। मैंने अपने हृदय की विशालता का परिचय दिया। एक दाँव और खेल लो। तुम पहले ही हाथ में हुच गये। 'नहीं भैया, अब अँधेरा हो गया।' 'तुम्हारा अभ्यास छूट गया। क्या कभी खेलते नहीं?' 'खेलने का समय कहाँ मिलता है भैया!' हम दोनों मोटर पर जा बैठे और चिराग जलते-जलते पड़ाव पर पहुँच गये। गया चलते-चलते बोला-कल यहाँ गुल्ली-डण्डा होगा। सभी पुराने खिलाड़ी खेलेंगे। आप भी आओगे? जब आपको फुरसत हो, तभी खिलाड़ियों को बुलाऊँ। मैंने शाम का समय दिया और दूसरे दिन मैच देखने आया। कोई दस-दस आदमियों की मण्डली थी। कई मेरे लड़कपन के साथी निकले। अधिकांश युवक थे जिन्हें मैं पहचान न सका। खेल शुरू हुआ। मैं मोटर पर बैठा-बैठा तमाशा देखने लगा। आज गया का खेल, उसका वह नैपुण्य देखकर



मैं चकित हो गया। टाँड़ लगाता, तो गुल्ली आसमान से बातें करती। कल की-सी वह झिझक, वह हिचकिचाहट, वह बेदिली आज न थी। लड़कपन में जो बात थी, आज उसने प्रौढ़ता प्राप्त कर ली थी। कहीं कल इसने मुझे इस तरह पदाया होता, तो मैं जरूर रोने लगता। उसके डण्डे की चोट खाकर गुल्ली दो सौ गज की खबर लाती थी।

पदनेवालों में एक युवक ने धाँधली की ! उसने अपने विचार में गुल्ली लोक ली थी। गया का कहना था-गुल्ली जमीन में लगकर उछली थी। इस पर दोनों में ताल ठोकने की नौबत आयी। युवक दब गया। गया का तमतमाया हुआ चेहरा देखकर डर गया। खेल में मुझे वही लड़कपन का आनन्द आ रहा था, जब हम सब कुछ भूलकर खेल में मस्त हो जाते थे। अब मुझे मालूम हुआ कि कल गया ने मेरे साथ खेला नहीं, केवल खेलने का बहाना किया। उसने मुझे दया का पात्र समझा। मैंने धाँधली की, पर उसे जरा भी क्रोध न आया। इसलिए कि वह खेल न रहा था, मुझे खेला रहा था, मेरा मान रख रहा था। वह मुझे पदाकर मेरा कचूमर नहीं निकालना चाहता था। अब मैं अफसर हूँ। यह अफसरी मेरे और उसके बीच में दीवार बन गयी है। अब मैं उसका लिहाज पा सकता हूँ, सदैव पा सकता हूँ, सहचर्य नहीं पा सकता। यह पद पाकर अब मैं केवल उसकी दया के योग्य हूँ। वह मुझे अपना जोड़ नहीं समझता। वह बड़ा हो गया है, मैं छोटा हो गया हूँ।

## बोध प्रश्न

अभी आपने 'गुल्ली-डंडा' पाठ पढ़ा। अब आप इस पाठ से कुछ प्रश्नों के उत्तर दें। दिए गए विकल्पों में से सही का चुनाव करें-

1. हाँ, तुम्हें दिन भर पदना पड़ेगा। यह कथन किसका है?

- |          |            |
|----------|------------|
| (क) लेखक | (ख) गया    |
| (ग) मोहन | (घ) दुर्गा |

2. पिताजी दुखी थे, क्योंकि

- |                                      |
|--------------------------------------|
| (क) यह बड़ी आमदनी की जगह थी          |
| (ख) यहाँ सब चीजें सस्ती थीं          |
| (ग) हमजोलियों से बिछुड़ जाने के कारण |
| (घ) मिथ्यावचन के कारण                |